श्रीगणेशाय नमः

श्रीजानकीवल्लभो विजयते

श्रीरामचरितमानस

चतुर्थ सोपान

किष्किन्धाकाण्ड

श्लोक

कुन्देन्दीवरसुन्दरावतिबलौ विज्ञानधामावुभौ
शोभाढ्यौ वरधन्विनौ श्रुतिनुतौ गोविप्रवृन्दप्रियौ।
मायामानुषरूपिणौ रघुवरौ सद्धर्मवर्मौं हितौ
सीतान्वेषणतत्परौ पथिगतौ भक्तिप्रदौ तौ हि नः॥ १॥

ब्रह्माम्भोधिसमुद्भवं कलिमलप्रध्वंसनं चाव्ययं
श्रीमच्छम्भुमुखेन्दुसुन्दरवरे संशोभितं सर्वदा।
संसारामयभेषजं सुखकरं श्रीजानकीजीवनं
धन्यास्ते कृतिनः पिबन्ति सततं श्रीरामनामामृतम्॥ २॥

सो. मुक्ति जन्म महि जानि ग्यान खानि अघ हानि कर
जहँ बस संभु भवानि सो कासी से कस न॥
जरत सकल सुर बृंद बिषम गरल जेहिं पान किय।

तेहि न भजसि मन मंद को कृपाल संकर सरिस ॥

आगें चले बहुरि रघुराया । रिष्यमूक परवत निराया ॥

तहँ रह सचिव सहित सुग्रीवा । आवत देखि अतुल बल सींवा ॥

अति सभीत कह सुनु हनुमाना । पुरुष जुगल बल रूप निधाना ॥

धरि बटु रूप देखु तैं जा । कहेसु जानि जियँ सयन बुझा ॥

पठ बालि होहिं मन मैला । भागौं तुरत तजौं यह सैला ॥

बिप्र रूप धरि कपि तहँ गय । माथ ना पूछत अस भय ॥

को तुम्ह स्यामल गौर सरीरा । छत्री रूप फिरहु बन बीरा ॥

कठिन भूमि कोमल पद गामी । कवन हेतु बिचरहु बन स्वामी ॥

मृदुल मनोहर सुंदर गाता । सहत दुसह बन आतप बाता ॥

की तुम्ह तीनि देव महँ को । नर नारायन की तुम्ह दो ॥

दो. जग कारन तारन भव भंजन धरनी भार ।

की तुम्ह अकिल भुवन पति लीन्ह मनुज अवतार ॥ १ ॥

कोसलेस दसरथ के जा । हम पितु बचन मानि बन आ ॥

नाम राम लछिमन दौ भा । संग नारि सुकुमारि सुहा ॥

इहाँ हरि निसिचर बैदेही । बिप्र फिरहिं हम खोजत तेही ॥

आपन चरित कहा हम गा । कहहु बिप्र निज कथा बुझा ॥

प्रभु पहिचानि परे गहि चरना। सो सुख उमा नहिं बरना॥
पुलकित तन मुख आव न बचना। देखत रुचिर बेष कै रचना॥
पुनि धीरजु धरि अस्तुति कीन्ही। हरष हृदयँ निज नाथहि चीन्ही॥
मोर न्या मैं पूछा सां। तुम्ह पूछहु कस नर की नां॥
तव माया बस फिरउँ भुलाना। ता ते मैं नहिं प्रभु पहिचाना॥

दो. एकु मैं मंद मोहबस कुटिल हृदय अग्यान।
पुनि प्रभु मोहि बिसारे दीनबंधु भगवान॥ २॥

जदपि नाथ बहु अवगुन मोरें। सेवक प्रभुहि परै जनि भोरें॥
नाथ जीव तव मायाँ मोहा। सो निस्तरइ तुम्हारेहिं छोहा॥
ता पर मैं रघुबीर दोहा। जानउँ नहिं कछु भजन उपा॥
सेवक सुत पति मातु भरोसें। रहइ असोच बनइ प्रभु पोसें॥
अस कहि परे चरन अकुला। निज तनु प्रगटि प्रीति उर छा॥
तब रघुपति उठा उर लावा। निज लोचन जल सींचि जुड़ावा॥
सुनु कपि जियँ मानसि जनि ऊना। तैं मम प्रिय लछिमन ते दूना॥
समदरसी मोहि कह सब को। सेवक प्रिय अनन्यगति सो॥

दो. सो अनन्य जाकें असि मति न टरइ हनुमंत।

मैं सेवक सचराचर रूप स्वामि भगवंत ॥ ३ ॥

देखि पवन सुत पति अनुकूला । हृदयँ हरष बीती सब सूला ॥
नाथ सैल पर कपिपति रह । सो सुग्रीव दास तव अह ॥
तेहि सन नाथ मयत्री कीजे । दीन जानि तेहि अभय करीजे ॥
सो सीता कर खोज कराहि । जहँ तहँ मरकट कोटि पठाहि ॥
एहि बिधि सकल कथा समुझा । लि दु जन पीठि चढ़ा ॥
जब सुग्रीवँ राम कहुँ देखा । अतिसय जन्म धन्य करि लेखा ॥
सादर मिले ना पद माथा । भैंटे अनुज सहित रघुनाथा ॥
कपि कर मन बिचार एहि रीती । करिहहिं बिधि मो सन ए प्रीती ॥

दो. तब हनुमंत उभय दिसि की सब कथा सुना ॥
पावक साखी दे करि जोरी प्रीती दृढ़ा ॥ ४ ॥

कीन्ही प्रीति कछु बीच न राखा । लछमिन राम चरित सब भाषा ॥
कह सुग्रीव नयन भरि बारी । मिलिहि नाथ मिथिलेसकुमारी ॥
मंत्रिन्ह सहित इहाँ एक बारा । बैठ रहैं मैं करत बिचारा ॥
गगन पंथ देखी मैं जाता । परबस परी बहुत बिलपाता ॥
राम राम हा राम पुकारी । हमहि देखि दीन्हे पट डारी ॥

मागा राम तुरत तेहिं दीन्हा। पट उर ला सोच अति कीन्हा॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। तजहु सोच मन आनहु धीरा॥
सब प्रकार करिहउँ सेवका। जेहि बिधि मिलिहि जानकी आ॥

दो. सखा बचन सुनि हरषे कृपासिधु बलसींव।
कारन कवन बसहु बन मोहि कहहु सुग्रीव॥ ५॥

नात बालि अरु मैं द्वौ भा। प्रीति रही कछु बरनि न जा॥
मय सुत मायावी तेहि नाँ। आवा सो प्रभु हमरें गाँ॥
अर्ध राति पुर द्वार पुकारा। बाली रिपु बल सहै न पारा॥
धावा बालि देखि सो भागा। मैं पुनि गयउँ बंधु सँग लागा॥
गिरिबर गुहाँ पैठ सो जा। तब बालीं मोहि कहा बुझा॥
परिखेसु मोहि एक पखवारा। नहिं आवौं तब जानेसु मारा॥
मास दिवस तहँ रहैं खरारी। निसरी रुधिर धार तहँ भारी॥
बालि हतेसि मोहि मारिहि आ। सिला दे तहँ चलैं परा॥
मंत्रिन्ह पुर देखा बिनु सां। दीन्हे मोहि राज बरिआ॥
बालि ताहि मारि गृह आवा। देखि मोहि जियँ भेद बढ़ावा॥
रिपु सम मोहि मारेसि अति भारी। हरि लीन्हेसि सर्बसु अरु नारी॥
ताकें भय रघुबीर कृपाला। सकल भुवन मैं फिरैं बिहाला॥

इहाँ साप बस आवत नाहीं। तदपि सभीत रहउँ मन माहीं॥
सुनि सेवक दुख दीनदयाला। फरकि उठीं द्वै भुजा बिसाला॥

दो. सुनु सुग्रीव मारिहउँ बालिहि एकहिं बान।
ब्रम्ह रुद्र सरनागत गँ न उबरिहिं प्रान॥ ६॥

जे न मित्र दुख होहिं दुखारी। तिन्हहि बिलोकत पातक भारी॥
निज दुख गिरि सम रज करि जाना। मित्रक दुख रज मेरु समाना॥
जिन्ह कें असि मति सहज न आ। ते सठ कत हठि करत मिता॥
कुपथ निवारि सुपंथ चलावा। गुन प्रगटे अवगुनन्हि दुरावा॥
देत लेत मन संक न धर। बल अनुमान सदा हित कर॥
बिपति काल कर सतगुन नेहा। श्रुति कह संत मित्र गुन एहा॥
आगें कह मृदु बचन बना। पाछें अनहित मन कुटिला॥
जा कर चित अहि गति सम भा। अस कुमित्र परिहरेहि भला॥
सेवक सठ नृप कृपन कुनारी। कपटी मित्र सूल सम चारी॥
सखा सोच त्यागहु बल मोरें। सब बिधि घटब काज मैं तोरें॥
कह सुग्रीव सुनहु रघुबीरा। बालि महाबल अति रनधीरा॥
दुंदुभी अस्थि ताल देखरा। बिनु प्रयास रघुनाथ ढहा॥
देखि अमित बल बाढ़ी प्रीती। बालि बधब इन्ह भइ परतीती॥

बार बार नावइ पद सीसा। प्रभुहि जानि मन हरष कपीसा॥
उपजा ग्यान बचन तब बोला। नाथ कृपाँ मन भयउ अलोला॥
सुख संपति परिवार बड़ा। सब परिहरि करिहउँ सेवका॥
ए सब रामभगति के बाधक। कहहिं संत तब पद अवराधक॥
सत्रु मित्र सुख दुख जग माहीं। माया कृत परमारथ नाहीं॥
बालि परम हित जासु प्रसादा। मिलेहु राम तुम्ह समन बिषादा॥
सपनें जेहि सन हो लरा। जागें समुझत मन सकुचा॥
अब प्रभु कृपा करहु एहि भाँती। सब तजि भजनु करौं दिन राती॥
सुनि बिराग संजुत कपि बानी। बोले बिहँसि रामु धनुपानी॥
जो कछु कहेहु सत्य सब सो। सखा बचन मम मृषा न हो॥
नट मरकट इव सबहि नचावत। रामु खगेस बेद अस गावत॥
लै सुग्रीव संग रघुनाथा। चले चाप सायक गहि हाथा॥
तब रघुपति सुग्रीव पठावा। गर्जेसि जा निकट बल पावा॥
सुनत बालि क्रोधातुर धावा। गहि कर चरन नारि समुझावा॥
सुनु पति जिन्हहि मिले सुग्रीवा। ते द्वौ बंधु तेज बल सींवा॥
कोसलेस सुत लछिमन रामा। कालहु जीति सकहिं संग्रामा॥

दो. कह बालि सुनु भीरु प्रिय समदरसी रघुनाथ।
जौं कदाचि मोहि मारहिं तौ पुनि हौं सनाथ॥ ७॥

अस कहि चला महा अभिमानी। तृन समान सुग्रीवहि जानी॥
भिरे उभौ बाली अति तर्जा। मुठिका मारि महाधुनि गर्जा॥
तब सुग्रीव बिकल हो भागा। मुष्टि प्रहार बज्र सम लागा॥
मैं जो कहा रघुबीर कृपाला। बंधु न हो मोर यह काला॥
एकरूप तुम्ह भ्राता दो। तेहि भ्रम तें नहिं मारैं सो॥
कर परसा सुग्रीव सरीरा। तनु भा कुलिस ग सब पीरा॥
मेली कंठ सुमन कै माला। पठवा पुनि बल दे बिसाला॥
पुनि नाना बिधि भ लरा। बिटप ओट देखहिं रघुरा॥

दो. बहु छल बल सुग्रीव कर हियँ हारा भय मानि।
मारा बालि राम तब हृदय माझ सर तानि॥ ८॥

परा बिकल महि सर के लागें। पुनि उठि बैठ देखि प्रभु आगें॥
स्याम गात सिर जटा बनाँ। अरुन नयन सर चाप चढ़ाँ॥
पुनि पुनि चितइ चरन चित दीन्हा। सुफल जन्म माना प्रभु चीन्हा॥
हृदयँ प्रीति मुख बचन कठोरा। बोला चितइ राम की ओरा॥
धर्म हेतु अवतरेहु गोसा। मारेहु मोहि ब्याध की ना॥
मैं बैरी सुग्रीव पिआरा। अवगुन कबन नाथ मोहि मारा॥

अनुज बधू भगिनी सुत नारी। सुनु सठ कन्या सम ए चारी॥
इन्हहि कुदृष्टि बिलोकइ जो। ताहि बधें कछु पाप न हो॥
मुढ़ तोहि अतिसय अभिमाना। नारि सिखावन करसि न काना॥
मम भुज बल आश्रित तेहि जानी। मारा चहसि अधम अभिमानी॥

दो. सुनहु राम स्वामी सन चल न चातुरी मोरि।
प्रभु अजहूँ मैं पापी अंतकाल गति तोरि॥ ९॥

सुनत राम अति कोमल बानी। बालि सीस परसे निज पानी॥
अचल करौं तनु राखहु प्राना। बालि कहा सुनु कृपानिधाना॥
जन्म जन्म मुनि जतनु कराहीं। अंत राम कहि आवत नाहीं॥
जासु नाम बल संकर कासी। देत सबहि सम गति अविनासी॥
मम लोचन गोचर सो आवा। बहुरि कि प्रभु अस बनिहि बनावा॥

छं. सो नयन गोचर जासु गुन नित नेति कहि श्रुति गावहीं।
जिति पवन मन गो निरस करि मुनि ध्यान कबहुँक पावहीं॥
मोहि जानि अति अभिमान बस प्रभु कहे राखु सरीरही।
अस कवन सठ हठि काटि सुरतरु बारि करिहि बबूरही॥ १॥

अब नाथ करि करुना बिलोकहु देहु जो बर मागँ।
जेहिं जोनि जन्मौं कर्म बस तहँ राम पद अनुरागँ॥
यह तनय मम सम बिनय बल कल्यानप्रद प्रभु लीजि।
गहि बाहँ सुर नर नाह आपन दास अंगद कीजि॥ २॥

दो. राम चरन दृढ़ प्रीति करि बालि कीन्ह तनु त्याग।
सुमन माल जिमि कंठ ते गिरत न जानइ नाग॥ १०॥

राम बालि निज धाम पठावा। नगर लोग सब ब्याकुल धावा॥
नाना बिधि बिलाप कर तारा। छूटे केस न देह सँभारा॥
तारा बिकल देखि रघुराया। दीन्ह ग्यान हरि लीन्ही माया॥
छिति जल पावक गगन समीरा। पंच रचित अति अधम सरीरा॥
प्रगट सो तनु तव आगें सोवा। जीव नित्य केहि लगि तुम्ह रोवा॥
उपजा ग्यान चरन तब लागी। लीन्हेसि परम भगति बर मागी॥
उमा दारु जोषित की ना। सबहि नचावत रामु गोसा॥
तब सुग्रीवहि आयसु दीन्हा। मृतक कर्म बिधिबत सब कीन्हा॥
राम कहा अनुजहि समुझा। राज देहु सुग्रीवहि जा॥
रघुपति चरन ना करि माथा। चले सकल प्रेरित रघुनाथा॥

दो. लछिमन तुरत बोला पुरजन बिप्र समाज।
राजु दीन्ह सुग्रीव कहँ अंगद कहँ जुबराज॥ ११॥

उमा राम सम हित जग माहीं। गुरु पितु मातु बंधु प्रभु नाहीं॥
सुर नर मुनि सब कै यह रीती। स्वारथ लागि करहिं सब प्रीती॥
बालि त्रास ब्याकुल दिन राती। तन बहु ब्रन चिंताँ जर छाती॥
सो सुग्रीव कीन्ह कपिरा। अति कृपाल रघुबीर सुभा॥
जानतहुँ अस प्रभु परिहरहीं। काहे न बिपति जाल नर परहीं॥
पुनि सुग्रीवहि लीन्ह बोला। बहु प्रकार नृपनीति सिखा॥
कह प्रभु सुनु सुग्रीव हरीसा। पुर न जाँ दस चारि बरीसा॥
गत ग्रीषम बरषा रितु आ। रहिहउँ निकट सैल पर छा॥
अंगद सहित करहु तुम्ह राजू। संतत हृदय धरेहु मम काजू॥
जब सुग्रीव भवन फिरि आ। रामु प्रबरषन गिरि पर छा॥

दो. प्रथमहिं देवन्ह गिरि गुहा राखे रुचिर बना।
राम कृपानिधि कछु दिन बास करहिंगे आ॥ १२॥

सुंदर बन कुसुमित अति सोभा। गुंजत मधुप निकर मधु लोभा॥
कंद मूल फल पत्र सुहा। भ बहुत जब ते प्रभु आ॥

देखि मनोहर सैल अनूपा। रहे तहँ अनुज सहित सुरभूपा॥
मधुकर खग मृग तनु धरि देवा। करहिं सिद्ध मुनि प्रभु कै सेवा॥
मंगलरुप भयउ बन तब ते। कीन्ह निवास रमापति जब ते॥
फटिक सिला अति सुभ्र सुहा। सुख आसीन तहाँ द्वौ भा॥
कहत अनुज सन कथा अनेका। भगति बिरति नृपनीति बिबेका॥
बरषा काल मेघ नभ छा। गरजत लागत परम सुहा॥

दो. लछिमन देखु मोर गन नाचत बारिद पैखि।
गृही बिरति रत हरष जस बिष्नु भगत कहुँ देखि॥ १३॥

घन घमंड नभ गरजत घोरा। प्रिया हीन डरपत मन मोरा॥
दामिनि दमक रह न घन माहीं। खल कै प्रीति जथा थिर नाहीं॥
बरषहिं जलद भूमि निराँ। जथा नवहिं बुध बिद्या पाँ॥
बूँद अघात सहहिं गिरि कैंसें। खल के बचन संत सह जैसें॥
छुद्र नदीं भरि चलीं तोरा। जस थोरेहुँ धन खल इतरा॥
भूमि परत भा ढाबर पानी। जनु जीवहि माया लपटानी॥
समिटि समिटि जल भरहिं तलावा। जिमि सदगुन सज्जन पहिं आवा॥
सरिता जल जलनिधि महुँ जा। हो अचल जिमि जिव हरि पा॥

दो. हरित भूमि तृन संकुल समुझि परहिं नहिं पंथ।
जिमि पाखंड बाद तें गुप्त होहिं सदग्रंथ॥ १४॥

दादुर धुनि चहु दिसा सुहा। बेद पढ़हिं जनु बटु समुदा॥
नव पल्लव भ बिटप अनेका। साधक मन जस मिलें बिबेका॥
अर्क जबास पात बिनु भय। जस सुराज खल उद्यम गय॥
खोजत कतहुँ मिलइ नहिं धूरी। करइ क्रोध जिमि धरमहि दूरी॥
ससि संपन्न सोह महि कैसी। उपकारी कै संपति जैसी॥
निसि तम घन खद्योत बिराजा। जनु दंभिन्ह कर मिला समाजा॥
महाबृष्टि चलि फूटि किआरीं। जिमि सुतंत्र भँ बिगरहिं नारीं॥
कृषी निरावहिं चतुर किसाना। जिमि बुध तजहिं मोह मद माना॥
देखित चक्रबाक खग नाहीं। कलिहि पा जिमि धर्म पराहीं॥
ऊषर बरषइ तृन नहिं जामा। जिमि हरिजन हियँ उपज न कामा॥
बिबिध जंतु संकुल महि भ्राजा। प्रजा बाढ़ जिमि पा सुराजा॥
जहँ तहँ रहे पथिक थकि नाना। जिमि इंद्रिय गन उपजें ग्याना॥

दो. कबहुँ प्रबल बह मारुत जहँ तहँ मेघ बिलाहिं।
जिमि कपूत के उपजें कुल सद्धर्म नसाहिं॥ १५क॥

कबहुँ दिवस महँ निबिड़ तम कबहुँक प्रगट पतंग।
बिनसइ उपजइ ग्यान जिमि पा कुसंग सुसंग॥ १५ख॥

बरषा बिगत सरद रितु आ। लछिमन देखहु परम सुहा॥
फूलें कास सकल महि छा। जनु बरषाँ कृत प्रगट बुढ़ा॥
उदित अगस्ति पंथ जल सोषा। जिमि लोभहि सोषइ संतोषा॥
सरिता सर निर्मल जल सोहा। संत हृदय जस गत मद मोहा॥
रस रस सूख सरित सर पानी। ममता त्याग करहिं जिमि ग्यानी॥
जानि सरद रितु खंजन आ। पा समय जिमि सुकृत सुहा॥
पंक न रेनु सोह असि धरनी। नीति निपुन नृप कै जसि करनी॥
जल संकोच बिकल भइँ मीना। अबुध कुटुंबी जिमि धनहीना॥
बिनु धन निर्मल सोह अकासा। हरिजन इव परिहरि सब आसा॥
कहुँ कहुँ बृष्टि सारदी थोरी। को एक पाव भगति जिमि मोरी॥

दो. चले हरषि तजि नगर नृप तापस बनिक भिखारि।
जिमि हरिभगत पा श्रम तजहि आश्रमी चारि॥ १६॥

सुखी मीन जे नीर अगाधा। जिमि हरि सरन न एकउ बाधा॥
फूलें कमल सोह सर कैसा। निर्गुन ब्रम्ह सगुन भँ जैसा॥

गुंजत मधुकर मुखर अनूपा। सुंदर खग रव नाना रूपा॥
चक्रबाक मन दुख निसि पैखी। जिमि दुर्जन पर संपति देखी॥
चातक रटत तृषा अति ओही। जिमि सुख लहइ न संकरद्रोही॥
सरदातप निसि ससि अपहर। संत दरस जिमि पातक टर॥
देखि इंदु चकोर समुदा। चितवतहिं जिमि हरिजन हरि पा॥
मसक दंस बीते हिम त्रासा। जिमि द्विज द्रोह किँ कुल नासा॥

दो. भूमि जीव संकुल रहे ग सरद रितु पा।
सदगुर मिले जाहिं जिमि संसय भ्रम समुदा॥ १७॥

बरषा गत निर्मल रितु आ। सुधि न तात सीता कै पा॥
एक बार कैसेहुँ सुधि जानौं। कालहु जीत निमिष महुँ आनौं॥
कतहुँ रहउ जौं जीवति हो। तात जतन करि आनैं सो॥
सुग्रीवहुँ सुधि मोरि बिसारी। पावा राज कोस पुर नारी॥
जेहिं सायक मारा मैं बाली। तेहिं सर हतौं मूढ़ कहँ काली॥
जासु कृपाँ छूटहीं मद मोहा। ता कहुँ उमा कि सपनेहुँ कोहा॥
जानहिं यह चरित्र मुनि ग्यानी। जिन्ह रघुबीर चरन रति मानी॥
लछिमन क्रोधवंत प्रभु जाना। धनुष चढ़ा गहे कर बाना॥

दो. तब अनुजहि समुझावा रघुपति करुना सींव ॥
भय देखा लै आवहु तात सखा सुग्रीव ॥ १८ ॥

इहाँ पवनसुत हृदयँ बिचारा । राम काजु सुग्रीवँ बिसारा ॥
निकट जा चरनन्हि सिरु नावा । चारिहु बिधि तेहि कहि समुझावा ॥
सुनि सुग्रीवँ परम भय माना । बिषयँ मोर हरि लीन्हे ग्याना ॥
अब मारुतसुत दूत समूहा । पठवहु जहँ तहँ बानर जूहा ॥
कहहु पाख महुँ आव न जो । मोरें कर ता कर बध हो ॥
तब हनुमंत बोला दूता । सब कर करि सनमान बहूता ॥
भय अरु प्रीति नीति देखा । चले सकल चरनन्हि सिर ना ॥
एहि अवसर लछिमन पुर आ । क्रोध देखि जहँ तहँ कपि धा ॥

दो. धनुष चढ़ा कहा तब जारि करउँ पुर छार ।
ब्याकुल नगर देखि तब आयउ बालिकुमार ॥ १९ ॥

चरन ना सिरु बिनती कीन्ही । लछिमन अभय बाँह तेहि दीन्ही ॥
क्रोधवंत लछिमन सुनि काना । कह कपीस अति भयँ अकुलाना ॥
सुनु हनुमंत संग लै तारा । करि बिनती समुझा कुमारा ॥
तारा सहित जा हनुमाना । चरन बंदि प्रभु सुजस बखाना ॥

करि बिनती मंदिर लै आ। चरन पखारि पलँग बैठा॥
तब कपीस चरनन्हि सिरु नावा। गहि भुज लछिमन कंठ लगावा॥
नाथ बिषय सम मद कछु नाहीं। मुनि मन मोह करइ छन माहीं॥
सुनत बिनीत बचन सुख पावा। लछिमन तेहि बहु बिधि समुझावा॥
पवन तनय सब कथा सुना। जेहि बिधि ग दूत समुदा॥

दो. हरषि चले सुग्रीव तब अंगदादि कपि साथ।
रामानुज आगें करि आ जहँ रघुनाथ॥ २०॥

ना चरन सिरु कह कर जोरी। नाथ मोहि कछु नाहिन खोरी॥
अतिसय प्रबल देव तब माया। छूटइ राम करहु जौं दाया॥
बिषय बस्य सुर नर मुनि स्वामी। मैं पावँर पसु कपि अति कामी॥
नारि नयन सर जाहि न लागा। घोर क्रोध तम निसि जो जागा॥
लोभ पाँस जेहिं गर न बँधाया। सो नर तुम्ह समान रघुराया॥
यह गुन साधन तें नहिं हो। तुम्हरी कृपाँ पाव को को॥
तब रघुपति बोले मुसका। तुम्ह प्रिय मोहि भरत जिमि भा॥
अब सो जतनु करहु मन ला। जेहि बिधि सीता कै सुधि पा॥

दो. एहि बिधि होत बतकही आ बानर जूथ।

नाना बरन सकल दिसि देखि कीस बरुथ ॥ २१ ॥

बानर कटक उमा में देखा । सो मूरुख जो करन चह लेखा ॥
आ राम पद नावहिं माथा । निरखि बदनु सब होहिं सनाथा ॥
अस कपि एक न सेना माहीं । राम कुसल जेहि पूछी नाहीं ॥
यह कछु नहिं प्रभु कइ अधिका । बिस्वरूप ब्यापक रघुरा ॥
ठाढ़े जहँ तहँ आयसु पा । कह सुग्रीव सबहि समुझा ॥
राम काजु अरु मोर निहोरा । बानर जूथ जाहु चहुँ ओरा ॥
जनकसुता कहुँ खोजहु जा । मास दिवस महँ आहु भा ॥
अवधि मेटि जो बिनु सुधि पाँ । आवइ बनिहि सो मोहि मराँ ॥

दो. बचन सुनत सब बानर जहँ तहँ चले तुरंत ।
तब सुग्रीवँ बोला अंगद नल हनुमंत ॥ २२ ॥

सुनहु नील अंगद हनुमाना । जामवंत मतिधीर सुजाना ॥
सकल सुभट मिलि दच्छिन जाहू । सीता सुधि पूँछे सब काहू ॥
मन क्रम बचन सो जतन बिचारेहु । रामचंद्र कर काजु सँवारेहु ॥
भानु पीठि से उर आगी । स्वामिहि सर्ब भाव छल त्यागी ॥
तजि माया से परलोका । मिटहिं सकल भव संभव सोका ॥

देह धरे कर यह फलु भा। भजि राम सब काम बिहा॥
सो गुनग्य सो बड़भागी। जो रघुबीर चरन अनुरागी॥
आयसु मागि चरन सिरु ना। चले हरषि सुमिरत रघुरा॥
पाछें पवन तनय सिरु नावा। जानि काज प्रभु निकट बोलावा॥
परसा सीस सरोरुह पानी। करमुद्रिका दीन्हि जन जानी॥
बहु प्रकार सीतहि समुझाहु। कहि बल बिरह बेगि तुम्ह आहु॥
हनुमत जन्म सुफल करि माना। चले हृदयँ धरि कृपानिधाना॥
जद्यपि प्रभु जानत सब बाता। राजनीति राखत सुरत्राता॥

दो. चले सकल बन खोजत सरिता सर गिरि खोह।
राम काज लयलीन मन बिसरा तन कर छोह॥ २३॥

कतहुँ हो निसिचर सैं भेटा। प्रान लेहिं एक एक चपेटा॥
बहु प्रकार गिरि कानन हेरहिं। को मुनि मिलत ताहि सब घेरहिं॥
लागि तृषा अतिसय अकुलाने। मिलइ न जल घन गहन भुलाने॥
मन हनुमान कीन्ह अनुमाना। मरन चहत सब बिनु जल पाना॥
चढ़ि गिरि सिखर चहूँ दिसि देखा। भूमि बिबिर एक कौतुक पेखा॥
चक्रबाक बक हंस उड़ाहीं। बहुतक खग प्रबिसहिं तेहि माहीं॥
गिरि ते उतरि पवनसुत आवा। सब कहुँ लै सो बिबर देखावा॥

आगें कै हनुमंतहि लीन्हा। पैठे बिबर बिलंबु न कीन्हा॥

दो. दीख जा उपवन बर सर बिगसित बहु कंज।
मंदिर एक रुचिर तहँ बैठि नारि तप पुंज॥ २४॥

दूरि ते ताहि सबन्हि सिर नावा। पूछें निज बृत्तांत सुनावा॥
तेहिं तब कहा करहु जल पाना। खाहु सुरस सुंदर फल नाना॥
मज्जनु कीन्ह मधुर फल खा। तासु निकट पुनि सब चलि आ॥
तेहिं सब आपनि कथा सुना। मैं अब जाब जहाँ रघुरा॥
मूदहु नयन बिबर तजि जाहू। पैहहु सीतहि जनि पछिताहू॥
नयन मूदि पुनि देखहिं बीरा। ठाढ़े सकल सिंधु कें तीरा॥
सो पुनि ग जहाँ रघुनाथा। जा कमल पद नासि माथा॥
नाना भाँति बिनय तेहिं कीन्ही। अनपायनी भगति प्रभु दीन्ही॥

दो. बदरीबन कहुँ सो ग प्रभु अग्या धरि सीस।
उर धरि राम चरन जुग जे बंदत अज ईस॥ २५॥

इहाँ बिचारहिं कपि मन माहीं। बीती अवधि काज कछु नाहीं॥
सब मिलि कहहिं परस्पर बाता। बिनु सुधि लँ करब का भ्राता॥

कह अंगद लोचन भरि बारी। दुहुँ प्रकार भइ मृत्यु हमारी॥
इहाँ न सुधि सीता कै पा। उहाँ गँ मारिहि कपिरा॥
पिता बधे पर मारत मोही। राखा राम निहोर न ओही॥
पुनि पुनि अंगद कह सब पाहीं। मरन भयउ कछु संसय नाहीं॥
अंगद बचन सुनत कपि बीरा। बोलि न सकहिं नयन बह नीरा॥
छन एक सोच मगन हो रहे। पुनि अस वचन कहत सब भ॥
हम सीता कै सुधि लिन्हें बिना। नहिं जैहैं जुबराज प्रबीना॥
अस कहि लवन सिंधु तट जा। बैठे कपि सब दर्भ डसा॥
जामवंत अंगद दुख देखी। कहिं कथा उपदेस बिसेषी॥
तात राम कहुँ नर जनि मानहु। निर्गुन ब्रम्ह अजित अज जानहु॥

दो. निज इच्छा प्रभु अवतरइ सुर महि गो द्विज लागि।
सगुन उपासक संग तहँ रहहिं मोच्छ सब त्यागि॥ २६॥

एहि बिधि कथा कहहि बहु भाँती गिरि कंदराँ सुनी संपाती॥
बाहेर हो देखि बहु कीसा। मोहि अहार दीन्ह जगदीसा॥
आजु सबहि कहँ भच्छन करँ। दिन बहु चले अहार बिनु मरँ॥
कबहुँ न मिल भरि उदर अहारा। आजु दीन्ह बिधि एकहिं बारा॥
डरपे गीध बचन सुनि काना। अब भा मरन सत्य हम जाना॥

कपि सब उठे गीध कहँ देखी। जामवंत मन सोच बिसेषी॥
कह अंगद बिचारि मन माहीं। धन्य जटायू सम को नाहीं॥
राम काज कारन तनु त्यागी। हरि पुर गयउ परम बड़ भागी॥
सुनि खग हरष सोक जुत बानी। आवा निकट कपिन्ह भय मानी॥
तिन्हहि अभय करि पूछेसि जा। कथा सकल तिन्ह ताहि सुना॥
सुनि संपाति बंधु कै करनी। रघुपति महिमा बधुबिधि बरनी॥

दो. मोहि लै जाहु सिंधुतट देँ तिलांजलि ताहि।
बचन सहा करवि मैं पैहहु खोजहु जाहि॥ २७॥

अनुज क्रिया करि सागर तीरा। कहि निज कथा सुनहु कपि बीरा॥
हम द्वौ बंधु प्रथम तरुना। गगन ग रबि निकट उडा॥
तेज न सहि सक सो फिरि आवा। मै अभिमानी रबि निरावा॥
जरे पंख अति तेज अपारा। परेँ भूमि करि घोर चिकारा॥
मुनि एक नाम चंद्रमा ओही। लागी दया देखी करि मोही॥
बहु प्रकार तेंहि ग्यान सुनावा। देहि जनित अभिमानी छड़ावा॥
त्रेताँ ब्रह्म मनुज तनु धरिही। तासु नारि निसिचर पति हरिही॥
तासु खोज पठइहि प्रभू दूता। तिन्हहि मिलें तैं होब पुनीता॥
जमिहहिं पंख करसि जनि चिंता। तिन्हहि देखा देहेसु तैं सीता॥

मुनि कइ गिरा सत्य भइ आजू। सुनि मम बचन करहु प्रभु काजू॥
गिरि त्रिकूट ऊपर बस लंका। तहँ रह रावन सहज असंका॥
तहँ असोक उपबन जहँ रह॥ सीता बैठि सोच रत अह॥
दो. मैं देखउँ तुम्ह नाहि गीघहि दष्टि अपार॥
बूढ भयउँ न त करतैं कछुक सहाय तुम्हार॥ २८॥

जो नाघइ सत जोजन सागर। करइ सो राम काज मति आगर॥
मोहि बिलोकि धरहु मन धीरा। राम कृपाँ कस भयउ सरीरा॥
पापि जा कर नाम सुमिरहीं। अति अपार भवसागर तरहीं॥
तासु दूत तुम्ह तजि कदरा। राम हृदयँ धरि करहु उपा॥
अस कहि गरुड़ गीध जब गय। तिन्ह कें मन अति बिसमय भय॥
निज निज बल सब काहूँ भाषा। पार जा कर संसय राखा॥
जरठ भयउँ अब कहइ रिछेसा। नहिं तन रहा प्रथम बल लेसा॥
जबहिं त्रिबिक्रम भ खरारी। तब मैं तरुन रहैं बल भारी॥

दो. बलि बाँधत प्रभु बाढे सो तनु बरनि न जा।
उभय धरी महँ दीन्ही सात प्रदच्छिन धा॥ २९॥

अंगद कहइ जाँ मैं पारा। जियँ संसय कछु फिरती बारा॥

जामवंत कह तुम्ह सब लायक। पठइ किमि सब ही कर नायक॥
कहइ रीछपति सुनु हनुमाना। का चुप साधि रहेहु बलवाना॥
पवन तनय बल पवन समाना। बुधि बिबेक बिग्यान निधाना॥
कवन सो काज कठिन जग माहीं। जो नहिं हो तात तुम्ह पाहीं॥
राम काज लगि तब अवतारा। सुनतहिं भयउ पर्वताकारा॥
कनक बरन तन तेज बिराजा। मानहु अपर गिरिन्ह कर राजा॥
सिंहनाद करि बारहिं बारा। लीलहीं नाषउँ जलनिधि खारा॥
सहित सहाय रावनहि मारी। आनउँ इहाँ त्रिकूट उपारी॥
जामवंत मैं पूँछउँ तोही। उचित सिखावनु दीजहु मोही॥
एतना करहु तात तुम्ह जा। सीतहि देखि कहहु सुधि आ॥
तब निज भुज बल राजिव नैना। कौतुक लागि संग कपि सेना॥

छं. -कपि सेन संग सँघारि निसिचर रामु सीतहि आनिहैं।
त्रैलोक पावन सुजसु सुर मुनि नारदादि बखानिहैं॥
जो सुनत गावत कहत समुझत परम पद नर पाव।
रघुबीर पद पाथोज मधुकर दास तुलसी गाव॥

दो. भव भेषज रघुनाथ जसु सुनहि जे नर अरु नारि।
तिन्ह कर सकल मनोरथ सिद्ध करिहि त्रिसिरारि॥ ३०क॥

सो. नीलोत्पल तन स्याम काम कोटि सोभा अधिक।

सुनि तासु गुन ग्राम जासु नाम अघ खग बधिक॥ ३०ख॥

मासपारायण तेसवाँ विश्राम

इति श्रीमद्रामचरितमानसे सकलकलिकलुषविध्वंसने

चतुर्थ सोपानः समाप्तः।

किष्किन्धाकाण्ड समाप्त